साक्षरता : कहां से शुरू करें ?

पीटर वेस्टवुड

शिक्षक के समक्ष एक बड़ी चुनौती यह होती है कि आरंभिक स्तर पर बच्चों को पढ़ना-लिखना कैसे सिखाएं कि वे धारा प्रवाह पढ़ सकें और समझ सकें; यह लेख पूर्ण भाषा पद्धति एवं वर्ण पद्धति का विवेचन करते हुए बच्चों की साक्षरता में आने वाली समस्याओं के लिए किसी एक तरीके के बजाय उनकी जरूरतों के अनुरूप अलग-अलग तरीके अपनाने की पैरवी करता है।

(इस अध्याय में 'पढ़ने' का आशय किसी लिखी हुई चीज को पढ़ने की काबिलियत से है न कि पढ़ने-लिखने के सामान्य अर्थ से।)

कायदे से किसी भी स्कूल के पठन कार्यक्रम में इतनी ताकत होनी चाहिए कि वह बच्चों को पढ़ने का ऐसा अनुभव उपलब्ध कराए कि वे धाराप्रवाह पढ़ना जरूर सीख जाएं। अफसोस, ज्यादातर स्कूल इस आदर्श से बहुत दूर रह जाते हैं।

(ओमेनसन 1985 : 35)

पढ़ना सीख लेना कोई मामूली काम नहीं है। औसत बौद्धिक क्षमता वाले बच्चों के लिए भी कई बार यह बड़ा टेढ़ा काम साबित होता है (जिलेट एवं बर्नार्ड 1989)। जिन बच्चों को सुनने में परेशानी है, जिनको सेरेब्रल पालसी है, जो ठीक से देख नहीं सकते, जो बौद्धिक या भावनात्मक रूप से अस्थिर हैं, ऐसे बच्चों के लिए तो यह वाकई बड़ी भारी चुनौती बन जाता है। मिसाल के तौर पर, अगर कोई बच्चा सुनने में कठिनाई महसूस करता है तो उसकी सामान्य शाब्दिक क्षमता का विकास भी कुंद हो जाएगा और शब्दों की ध्वन्यात्मक संरचना के प्रति वह पूरी तरह जागरूक नहीं बन पाएगा। इसी तरह, अगर कोई बच्चा सेरेब्रल पालसी से ग्रस्त है और यदि हम यह मान लें कि उसकी बौद्धिक क्षमता में कोई दिक्कत नहीं है तो भी उसके सामने चाक्षुक समस्याएं पैदा हो सकती हैं और ऐसे कामों में वह बहुत जल्दी थक सकता है जिनमें सावधानी से देखने की जरूरत होती है। अगर बच्चा देखने में कमजोर है तो उसको सूक्ष्मदर्शी उपकरणों की सहायता और बड़े छापे वाले अक्षरों की जरूरत भी पड़ सकती है। अगर बच्चा पूरी तरह नेत्रहीन है तो उसे परंपरागत छपी हुई सामग्री की जगह ब्रेल लिपि में तैयार की गई सामग्री की जरूरत पड़ेगी ही। बौद्धिक विकलांगता के फलस्वरूप

सीखने की रफ्तार बहुत धीमी हो जाती है और ऐसे बच्चे सामान्य से काफी बड़ी उम्र में जाकर पढ़ना सीख पाते हैं। कई मामलों में तो ऐसा भी होता है कि अगर विकलांगता मध्यम से गंभीर स्तर की है तो पूरी स्कूली शिक्षा के दौरान बच्चे इस अवस्था तक पहुंच ही नहीं पाते। कई बार भावनात्मक अस्थिरता के चलते कोई बच्चा इस हद तक आत्मलीन भी हो सकता है कि उसके लिए किसी और चीज पर ध्यान एकाग्र करना संभव ही न रहे और उसके भीतर प्रेरणा का गहरा अभाव हो। बहरहाल, ऐसे सभी बच्चों को कम से कम इस योग्य तो बनाया ही जा सकता है कि वे शब्दों को पहचानने की मूलभूत निपुणता हासिल कर लें भले ही बहुत उच्चस्तरीय पठन क्षमता अर्जित न कर पाएं। यहां तक कि बेहद कठिन समस्याओं से घिरे बच्चों के मामले में भी विशेष कोचिंग नाटकीय सुधार का साधन हो सकती है।

जानकारों का कहना है कि पढ़ना सीखने के लिए कोई एक पद्धति, कोई एक माध्यम, कोई एक तरीका या दर्शन कारगर नहीं हो सकता। इसका मतलब यह है कि अध्यापकों के पास जितनी ज्यादा और जितनी तरह की पद्धतियां उपलब्ध होंगी वे धीमा सीखने वाले बच्चों और खास तरह की मुश्किलों से जूझ रहे बच्चों को उतनी ही बेहतर मदद उपलब्ध करा पाएंगे :

> अनुसंधानों और हमारे अनुभवों से ऐसा दिखाई देता है कि जिन बच्चों को पढ़ने में मुश्किल पेश आ रही है उन सभी के मामले में जो पद्धति सफल रही है वह कई अलग-अलग पद्धतियों के विविध आयामों के मिश्रण से बनी होती है और बच्चे की व्यक्तिगत जरूरतों के अनुकूल होती है।
>
> (जिलेट एवं बर्नार्ड, 1989)

वर्तमान मनोभाषायी पद्धति

पढ़ना सिखाने की मौजूदा मुख्यधारा पद्धतियों में अक्षरों की पहचान और शब्दों की ध्वनि व रचना जैसी विशिष्ट क्षमताओं (यानी डीकोडिंग पद्धति) की शिक्षा को काफी हिकारत की नजर से देखा जाता है। यह तीखी प्रतिक्रिया मुख्य रूप से मनोभाषाशास्त्र (जैसे स्मिथ 1985, गुडमैन 1967) की उपज है। मनोभाषाशास्त्रीय पद्धति इस मान्यता पर आधारित है कि पढ़ने की बेहद प्रारंभिक अवस्था से ही विद्यार्थी शब्दों व वाक्यांशों का अनुमान लगाने के लिए भाषा के अपने अनुभव का इस्तेमाल करते हुए छपी हुई चीजों के अर्थ बूझना शुरू कर

पूर्ण भाषा दर्शन के समर्थकों का तर्क है कि इस पद्धति से ध्वनि निपुणता और हिज्जे निपुणता को तो पढ़ाया जा सकता है लेकिन यह अपने-आपमें कोई लक्ष्य नहीं है। इन निपुणताओं को अलग-अलग विद्यार्थियों के संदर्भ में उस समय संबोधित किया जाता है जब उनका प्रयोग किसी फौरी उद्देश्य की पूर्ति करता है।

देते हैं। गुडमैन ने इसी को 'एक मनोभाषाशास्त्रीय अटकलबाजी' का भी नाम दिया है (गोलाश 1982)। इस व्याख्या में इस बात पर जोर दिया गया है कि जिसे पढ़ना सिखाया जा रहा है वह अपने सामने उपलब्ध सारे सुरागों का इस्तेमाल करके प्रस्तुत वाक्य या पैराग्राफ में से अर्थ गढ़ता है। इसके लिए उसके सामने तीन मुख्य सहायक प्रणालियां मौजूद होती हैं :

- शब्दार्थ विज्ञान (सिमेंटिक यानी जो पढ़ा जा रहा है उसका अर्थ);
- वाक्य विन्यास संबंधी (सिंटेक्टिक यानी वाक्यों या वाक्यांशों की तार्किक व्याकरण सम्मत संरचना);
- दृश्य-ध्वनि संकेत (यानी छपे हुए चिन्हों और उनसे संबंधित ध्वनि-उच्चारणों के बीच सह-संबंध)।

मनोभाषाशास्त्रीय धारा में अर्थ पर जो जोर दिया जाता है उसका मतलब यह है कि अगर पढ़ने वाला इस बारे में समझदारी से सोच रहा है कि वह क्या पढ़ रहा है तो उसके सारे 'अनुमान' या अटकलें अर्थ संबंधी और वाक्य विन्यास

आदि सहायक साधनों ('ऊपर से नीचे की दिशा में केंद्रित' पद्धति) पर आधारित होती हैं और उसे विरले ही कभी उसके अक्षरों या शब्दांश (सिलेबल) ('नीचे से ऊपर की ओर केंद्रित' पद्धति) के आधार पर सबको डीकोड करने की जरूरत पड़ती है। इसी वजह से परंपरागत पठन शिक्षा पद्धतियों के मुकाबले इस धारा में ध्वन्यात्मक यानी फोनिक आयामों को तुलनात्मक रूप से कम प्राथमिकता दी जाती है (गुडमैन 1989)।

पूर्ण भाषा

कक्षा के स्तर पर लिखना और पढ़ना सिखाने के लिए मनोभाषाशास्त्रीय दृष्टिकोण अब 'पूर्ण भाषा' दर्शन पर आधारित है। डोनल्ड्सन (1992) के मुताबिक पूर्ण भाषा में पांच मुख्य पहलू होते हैं जो उसे दूसरी पद्धतियों से अलग बनाते हैं।

पूर्ण भाषा दर्शन : प्रधान आयाम (डोनल्ड्सन 1992)

साक्षरता के विकास के वास्ते पूर्ण भाषा दर्शन लागू करने के लिए कम से कम निम्नलिखित प्रणालियां आवश्यक होती हैं :

- विद्यार्थियों को हर रोज अच्छा साहित्य पढ़ाना और उनके लिए वास्तविक साहित्य उपलब्ध कराना ताकि वे खुद पढ़ सकें;
- स्थिर रूप से चुपचाप पढ़ने के लिए रोजाना समय उपलब्ध कराना;
- वास्तविक उद्देश्यों के लिए रोजाना पढ़ने और लिखने के मौके उपलब्ध कराना;
- संदर्भ से काटकर सिखाने की बजाय किसी खास संदर्भ में पढ़ने की निपुणता सिखाना;
- पाठ्यचर्या का एकीकरण करना ताकि ऐसी साक्षरता सामर्थ्य विकसित हो जिसका विभिन्न विषयों में समान रूप से इस्तेमाल किया जा सके।

जब बच्चे सीखने और समस्या हल करने के लिए पढ़ना-लिखना सीखते हैं तभी वे पढ़ना और लिखना सीखते हैं।

(गुडमैन 1989 : 70)

पूर्ण भाषा पद्धति में पढ़ने और लिखने सहित सारी भाषा कलाओं को ठीक माना जाता है और उन्हें सार्थक परिस्थितियों

इस बात से किसी शिक्षक को इनकार नहीं होगा कि पढ़ने का मकसद है अर्थ ग्रहण करना। न ही किसी को इस बात से इनकार होगा कि कोई व्यक्ति या बच्चा जितना ज्यादा पढ़ेगा वह उतना बेहतर पाठक बन पाएगा और पढ़ने में उतना ही ज्यादा आनंद का अनुभव कर पाएगा।

में साथ-साथ विकसित किया जाता है। यह पद्धति निपुणताओं पर आधारित क्रमिक पद्धति के विपरीत है।

(रे 1989 : 5)

गुडमैन (1989) पूर्ण भाषा दर्शन को कोई पद्धति या तरीका नहीं मानते। उन्होंने इसे पाठ्यचर्या का, सीखने का, सिखाने का और भाषा का एक दर्शन बताया है। उन्होंने पढ़ने और लिखने को लिखित भाषा के जरिए और लिखित भाषा में से अर्थ पैदा करने की एकीकृत प्रक्रियाओं के रूप में परिभाषित किया है। वे विद्यार्थियों को लगातार अपने लिए अर्थ गढ़ने में सक्षम, भाषा के साथ प्रयोग करने, निर्णय लेने और अनुमान लगाने, जोखिम उठाने और जरूरत पड़ने पर खुद को दुरुस्त करने वाले बच्चों के रूप में देखते हैं। पूर्ण भाषा दर्शन के समर्थकों का तर्क है कि इस पद्धति से ध्वनि निपुणता और हिज्जे निपुणता को तो पढ़ाया जा सकता है लेकिन यह अपने-आपमें कोई लक्ष्य नहीं है (न्यूमैन एवं चर्च 1990)। इन निपुणताओं को अलग-अलग विद्यार्थियों के संदर्भ में उस समय संबोधित किया जाता है जब उनका प्रयोग किसी फौरी उद्देश्य की पूर्ति करता है। मिसाल के तौर पर, जब किसी विद्यार्थी को किसी शब्द के सही हिज्जे की आवश्यकता होती है या उसे कोई ऐसा शब्द पहचानने की जरूरत होती है जिसका उस संदर्भ में अनुमान नहीं लगाया जा सकता तो इस आवश्यकता को संबोधित किया जाता है। इस सोच के मुताबिक, ध्वनि डीकोडिंग क्षमता और हिज्जे क्षमता को विशिष्ट अभ्यासों या

संदर्भ से कटे सबकों में नहीं पढ़ाया जा सकता।

पूर्ण भाषा पद्धति में अकसर प्रारंभिक अक्षरमालाओं की बजाय वास्तविक पाठों का इस्तेमाल करते हुए साहित्य आधारित कार्यक्रमों का प्रयोग किया जाता है। इसमें गणित, विज्ञान और पर्यावरण अध्ययन जैसे अन्य विषयों की पाठ्य सामग्रियों का भी धड़ल्ले से इस्तेमाल किया जाता है। लोगों का मानना है कि अगर पढ़ने और लिखने की क्षमता का वाकई प्रासंगिक अर्थों में इस्तेमाल किया जाना है तो विद्यार्थियों को अलग-अलग तरह के पाठ और अलग-अलग तरह की विधाओं के पाठ उपलब्ध कराए जाने चाहिएं।

पूर्ण भाषा दर्शन के समर्थकों का दावा है कि यह न केवल ऐसे विद्यार्थियों के लिए एक मूल्यवान पद्धति है जो आसानी से पढ़ना और लिखना सीख लेते हैं बल्कि खास तरह की जरूरतों वाले विद्यार्थियों और साक्षरता की समस्याओं से जूझ रहे वयस्कों के लिए भी काफी कारगर तरीका है (न्यूमैन एवं चर्च, 1990; क्रक्स 1991)। लेकिन पूर्ण भाषा पद्धति के आलोचकों की भी कमी नहीं है (टेलर 1991; व्हाइटहेड 1991)। इनका कहना है कि मनोभाषाशास्त्रियों की सोच केवल ऐसे बच्चों के लिए सही हो सकती है जो आसानी से पढ़ना सीख लेते हैं। उनके मुताबिक, ऐसे बच्चे लगभग स्वभाविक विकासात्मक प्रक्रिया की तरह पढ़ने की निपुणता भी हासिल कर सकते हैं। लेकिन जिन अध्यापकों ने निरंतर पढ़ने की समस्या से जूझ रहे बच्चों के बीच काम किया है वे जानते हैं कि ज्यादातर मामलों में और अर्थ अर्जित करने के वास्ते पढ़ने के लिए भी यह बहुत आवश्यक है कि उन्हें शब्दों की पहचान, अक्षरों का ज्ञान और अर्थ गढ़ने की क्षमता जरूर सिखाई जाए नहीं तो वे प्रगति नहीं कर सकते (वेस्टवुड 1986)। जैसा कि हेम्सफेल्ड ने पूर्ण भाषा पद्धति में मूलभूत निपुणता शिक्षा के समावेश के लिए दलील देते हुए कहा है, 'हम ककहरे के ज्ञान जैसी अत्यंत महत्त्वपूर्ण चीजें सिखाने के लिए बेतरतीब, भ्रामक सबकों पर निर्भर नहीं रह सकते' (1989 : 68)।

शब्दार्थ/डीकोडिंग निपुणता

खालिस मनोभाषाशास्त्रीय पद्धति में समस्याएं तब पैदा हो जाती हैं जब कोई बच्चा संदर्भ के अनुसार अर्थ का अनुमान लगाने में कतई सक्षम नहीं होता। संभव है कि भाषा के विषय में बच्चे के अनुभव, खासतौर से पुस्तकों का विस्तृत प्रयोग बहुत सीमित रहा हो और बच्चे की अपनी शब्दावली बहुत

बहुत सारे बच्चे अर्थ को बहुत आसानी से समझ जाते हैं और उसके नियमों को भी समझ लेते हैं लेकिन, कुछ बच्चे ऐसा नहीं कर पाते। ध्वन्यात्मकता की शिक्षा पर कितना जोर दिया जाना चाहिए इस बात का फैसला अलग-अलग बच्चों के लिए अलग-अलग ही किया जा सकता है।

संकुचित रही हो। इस बात से किसी शिक्षक को इनकार नहीं होगा कि पढ़ने का मकसद है अर्थ ग्रहण करना। न ही किसी को इस बात से इनकार होगा कि कोई व्यक्ति या बच्चा जितना ज्यादा पढ़ेगा वह उतना बेहतर पाठक बन पाएगा और पढ़ने में उतना ही ज्यादा आनंद का अनुभव कर पाएगा। लेकिन जब संदर्भ आधारित सुराग नाकाफी हों तो क्या उस समय किसी भी मौके पर शब्दों को पहचानने की निपुणता अर्जित किए बिना आप पूरा अर्थ ग्रहण कर सकते हैं और धाराप्रवाह पढ़ते जा सकते हैं ? स्टॉट (1981) ने इस बात पर खासतौर से एतराज उठाया है कि मनोभाषाशास्त्री विशेषज्ञ अध्यापकों को ध्वन्यात्मक कार्यों पर इतना कम ध्यान देने के लिए क्यों प्रेरित करते हैं। उनके लिए ध्वन्यात्मकता/फोनिक एक भावात्मक शब्द बन गया है। कुछ शैक्षिक दायरों में तो ध्वन्यात्मक क्षमताओं को सिखाना ही प्रतिक्रियावादी माना जाने लगा है और उसे हिकारत की नजर से देखा जाने लगा है। मगर, यह रवैया कुछ हालिया ऐसे अनुसंधानों के सामने धराशायी हो चुका है जिनमें इस शिक्षा के महत्त्व पर खूब रोशनी डाली गई है। स्नाइडर के मुताबिक 'असंख्य ऐसे अनुसंधान हैं जो पढ़ना सिखाने की प्रारंभिक अवस्था में ध्वनियों के प्रयोग का समर्थन करते हैं' (1992 : 15) (इन्हें भी देखें ग्रॉफ 1990; टनमर 1990; चैपमेन एवं टनमर 1991; एलड्रेज, क्विन एवं बटरफील्ड 1990; चॉल 1989)।

जो पद्धतियां शुरू से ही अर्थ के लिए पढ़ने की सोच पर जोर देती हैं वे सभी अर्थ को समझने की संभावना को केवल संयोगों पर छोड़ देती हैं लेकिन सच यह है कि जब तक बच्चे अर्थ पर महारत हासिल नहीं कर लेते तब तक वे स्वतंत्र पाठक नहीं बन सकते (नायडू 1981)। विभिन्न बच्चे ध्वन्यात्मक सिद्धांतों को सांयोगिक रूप से किस हद तक पकड़ पाते हैं, इस लिहाज से बच्चों के बीच भारी फर्क रहते हैं। बहुत सारे बच्चे अर्थ को बहुत आसानी से समझ जाते हैं और उसके नियमों को भी समझ लेते हैं लेकिन, कुछ बच्चे ऐसा नहीं कर पाते। ध्वन्यात्मकता की शिक्षा पर कितना जोर दिया जाना चाहिए इस बात का फैसला अलग-अलग बच्चों के लिए अलग-अलग ही किया जा सकता है। जहां तक चित्रात्मक-ध्वन्यात्मक प्रणालियों की समझदारी हासिल करने का सवाल है तो हमें तीन तरह के बच्चे दिखाई देते हैं। दूसरी श्रेणी में ऐसे बच्चे आते हैं जो खुद-ब-खुद अंतर्दृष्टि अर्जित कर लेते हैं। उन्हें प्रत्यक्ष रूप से बहुत ज्यादा सिखाने की जरूरत नहीं पड़ती। एक श्रेणी में ऐसे बच्चे आते हैं जिन्हें कुछ प्रारंभिक निर्देशों की जरूरत पड़ती है और इसके बाद वे अपने बूते पर आगे बढ़ने लगते हैं; इनके अलावा एक श्रेणी ऐसे बच्चों की होती है जो अपने बूते पर कभी भी यह क्षमता हासिल नहीं कर पाते। वे सिर्फ उतना ही सीख पाते हैं जितना उन्हें सिखा दिया जाता है (बारदा 1982)।

सुधारक शिक्षक (रेमेडियल टीचर) के रूप में और प्राथमिक व माध्यमिक स्तर पर विकलांग बच्चों को पढ़ाने के मेरे अनुभवों से ऐसा दिखाई देता है कि जिन बच्चों को पढ़ने में परेशानी महसूस होती है उनमें से अधिकांश के भीतर ध्वन्यात्मक ज्ञान का विकास बहुत कम होता है और उनके पास शब्दों को समझने की क्षमता बहुत सीमित होती है। उनके पास जिन निपुणताओं का अभाव है उनको विकसित करने के लिए उन्हें सावधनीपूर्वक संरचनाबद्ध पूरक ध्वन्यात्मकता पद्धति से काफी लाभ होता है। इस तरह के शिक्षण की हिमायत में ईड्स-क्नीप ने कहा है कि 'हमें मालूम है कि यह (यानी ध्वन्यात्मक निपुणताओं की शिक्षा) एक अच्छी चीज है जिसे पढ़ना सिखाने वाले अध्यापक इसलिए अपनाते हैं क्योंकि उन्हें ये तकनीकें उस समय सबसे ज्यादा उपयोगी और प्रभावी दिखाई पड़ती हैं जब बाकी सारी चीजें नाकाम हो जाती हैं' (1979:916)।

यहां इस बात पर जोर देना जरूरी है कि किसी भी बच्चे के लिए केवल ध्वन्यात्मक पद्धति की हिमायत नहीं की जा रही है

जिन बच्चों को सीखने में परेशानी महसूस हो रही है उनकी खास जरूरतों को पूरा करने के लिए ये बहुत जरूरी है कि उनकी वर्तमान निपुणताओं और ज्ञान को अच्छी तरह समझ लिया जाए।

चाहे बच्चे विशेष आवश्यकता वाले हों या सामान्य बच्चे हों। यहां सिर्फ इतनी दलील दी जा रही है कि एक संपूर्ण पठन कार्यक्रम के भीतर इस बात पर भी वाजिब ध्यान दिया जाना चाहिए कि ऐसे बच्चों को अर्थ ग्रहण क्षमता जरूर सिखाई जाए जिन्हें इस शिक्षा की जरूरत है। मनोभाषाशास्त्र और साहित्य आधारित कार्यक्रमों में निम्नलिखित आयामों के महत्त्व पर जोर दिया जाता है :

- बच्चे को उत्तेजनापरक पाठ्य सामग्री से घेर दिया जाए;
- ऐसा माहौल गढ़ा जाए जहां पढ़ना एक आनंददायक, आवश्यक और मूल्यवान काम हो;
- अध्यापक पढ़ने के अच्छे तरीके और रवैये का आदर्श प्रस्तुत करे;
- जो बच्चा स्वतंत्र रूप से पढ़ने की चेष्टा करता है उसे खूब प्रोत्साहित किया जाए।

ये कारक सभी बच्चों को धाराप्रवाह पाठक बनाने के लिए एक अनिवार्य मगर अपर्याप्त शर्त हैं। जब सीखने की संभावना को संयोगों के ऊपर छोड़ दिया जाता है तो सीखने में समस्या महसूस कर रहे बच्चे जोखिम में फंसने लगते हैं। कुछ विद्यार्थी अच्छे पाठक नहीं बन पाएंगे, इस संभावना पर अंकुश लगाने के लिए निम्नलिखित कारकों पर भी जरूर ध्यान दिया जाना चाहिए और पठन पाठ्यचर्या लागू करते हुए इन पर जरूर ध्यान दिया जाना चाहिए।

पढ़ने में कठिनाई महसूस कर रहे विद्यार्थियों की खास जरूरतें जिस बच्चे को पढ़ना सीखने में मुश्किलें महसूस हो रही हैं

उसके पास निम्नलिखित सुविधाएं या परिस्थितियां होनी चाहिएं :

- एक ऐसा अध्यापक जो उसकी परेशानी समझता हो और उसे प्रोत्साहित करे।
- आनंद और सूचना के लिए पढ़ने के ढेर सारे अवसर।
- इस बात की समझदारी कि पढ़ने के लिए क्या-क्या चाहिए होता है और पढ़ने से कौन-से मकसद पूरे होते हैं।
- विद्यार्थियों के लिए परिचित सामग्री का इस्तेमाल करते हुए सफल अभ्यास।
- परामर्श, प्रशंसा, प्रोत्साहन, सफलता और व्यक्तिगत प्रगति की मान्यता के जरिए बच्चे के आत्मविश्वास में वृद्धि।
- कक्षाओं की सावधानीपूर्वक योजना पर आधारित कार्यक्रम होना चाहिए जिसके लिए अतिरिक्त सहायता व अभ्यास हेतु मुख्यधारा की सामग्री व कार्यक्रम के साथ-साथ अतिरिक्त पूरक सामग्री तैयार करने की जरूरत भी पड़ सकती है। अगर शेष सामग्री के स्थान पर या उसके साथ-साथ बच्चों अथवा अध्यापकों द्वारा तैयार की गई किताबें भी पढ़ाई जा रही हैं तो उन्हें भी अनौपचारिक ढंग से पढ़ाने के बजाय सुनियोजित ढंग से पढ़ाया जाना चाहिए।
- प्रारंभिक पठन गतिविधियों (जैसे, फ्लैश कार्ड, शब्द से चित्रों का मिलान, देख-देख कर लिखना, वाक्य निर्माण, आदि) पर और ज्यादा समय दिया जाए।
- खूब अभ्यास और प्रत्येक अवस्था में सामग्री की समीक्षा पर और ज्यादा समय दिया जाना चाहिए।
- यदि इसके बाद भी प्रारंभिक अक्षरमालाओं का इस्तेमाल किया जाता है तो देखने के लिए शब्दों का चयन और तैयारी सावधानी से की जानी चाहिए।
- ध्वनि प्रशिक्षण (जैसे आवाजों के बीच भेद करना, ध्वनियों को मिलाकर शब्द बनाना, लंबे शब्दों को शब्दांशों में तोड़ना आदि) की भी अर्थ अर्जन निपुणताएं सिखाते हुए आवश्यकता हो सकती है।
- ध्वन्यात्मक ज्ञान और शब्द निर्माण की व्यवस्थित शिक्षा, बशर्ते ध्वनि या ध्वन्यात्मक समस्याओं द्वारा इसके विपरीत संकेत न दिया गया हो। जो निपुणताएं सिखाई जा रही हैं वे विद्यार्थियों द्वारा इस्तेमाल की जा रही वास्तविक पाठ्य सामग्रियों से उपजनी चाहिएं और उन पर लागू होनी चाहिएं।
- पठन गतिविधियों के साथ-साथ सही अक्षर निर्माण (छपाई) और हस्तलेखन भी सिखाया जाना चाहिए।
- जो चीजें सीख ली गई हैं उनको आपस में मिलाने और उनको जहन में बचाए रखने के लिए कुछ बच्चों को उंगलियों की अनुरेखण/ट्रेसिंग और अन्य बहुसंवेदी पद्धतियों (जैसे रंगीन अक्षर) आदि की भी आवश्यकता हो सकती है।

ऊपर जिन आयामों का जिक्र किया गया है उनमें से बहुत सारे पहले ही रीडिंग रिकवरी (Reading Recovery) (क्ले 1985) नामक पद्धति में शामिल किया गया है जिसका अध्याय 7 में जिक्र किया जा चुका है। मुख्यधारा की कक्षाओं में चाहे जो भी पद्धति अपनाई जा रही हो, सीखने में कठिनाई महसूस कर रहे विद्यार्थियों की मूलभूत जरूरतों को अवश्य पूरा किया जाना चाहिए। सभी बच्चों की साक्षरता निपुणता के विकास को बहुत ऊंची प्राथमिकता मिलनी चाहिए।

जिन बच्चों को सीखने में परेशानी महसूस हो रही है उनकी खास जरूरतों को पूरा करने के लिए ये बहुत जरूरी है कि उनकी वर्तमान निपुणताओं और ज्ञान को अच्छी तरह समझ लिया जाए। ◆

भाषान्तर : योगेन्द्र दत्त

लेखक परिचय

सीखने और सीखने की समस्याओं पर महत्त्वपूर्ण पुस्तकों के रचियता पीटर वेस्टवुड ने हर स्तर पर - स्कूल, कॉलेज और विश्वविद्यालयों में - करीब 50 वर्ष तक शिक्षण का गहन कार्य किया। दक्षिण आस्ट्रेलिया के फ्लिन्डर विश्वविद्यालय और हांगकांग विश्वविद्यालय से अपने कार्य के लिए पुरस्कृत।